नववैष्णव धर्म और श्रीमंत शंकरदेव

पुरबी कलिता

भारतीय भक्ति आंदोलन मध्यकालीन भारतीय परिस्थिति की उपज है। राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक परिस्थितियों की दयनीय अवस्था में यह आंदोलन उभरकर सामने आया था। राजनीतिक अस्थिरता, अराजकता, राज्यों-राजाओं में असहिष्णुता, अनेकता, पारस्परिक लड़ने-झगड़ने की प्रवृत्ति की प्रबलता, सामाजिक जीवन में अशिक्षा, कुशिक्षा, भ्रष्टाचार, अन्याय, अत्याचार, आर्थिक जीवन में खुले आम जमींदारों, अभिजात्य वर्ग के लोगों द्वारा शोषण, उत्पीड़न, अन्याय, धर्म के नाम पर पंडा-पुरोहितों द्वारा लूट, इस्लाम का व्यापक प्रभाव, मुस्लिम शासकों द्वारा हिन्दू धर्म और जनता परं किये गए अत्याचार, अपमान आदि चहुँ दिशाओं में अस्वस्थता थी, विपन्नता थी। युगीन परिस्थितियों को सामना करने के लिए कई संत-महात्मा सामने आये। उन महात्माओं का मूल लक्ष्य था समाज कल्याण, मानव कल्याण। फलस्वरुप संपूर्ण भारत में एक आंदोलन शुरू हुआ जिसे हम भक्ति आंदोलन के रुप में जानते है। दक्षिण में उसका ध्वजारोहण हुआ, फिर उत्तर भारत में और धीरे धीरे संम्पूर्ण भारत में उसका स्वर गूजने लगा। इस भक्ति आंदोलन ने भारतवर्ष के अन्य प्रांतों के समान उत्तरपूर्व क्षेत्र में भी विशेषत असम में व्यापक रुप से अपना विस्तृत प्रभाव डाला। संम्पूर्ण उत्तर पूर्वांचल में भक्ति आंदोलन के नारों का प्रचार करने में श्रीमंत शंकरदेव का योगदान महत्वपूर्ण है। असमिया जातीय जीवन में श्रीमंत शंकरदेव का अवदान अति महत्वपूर्ण है। महापुरुष शंकरदेव के समय से ही असम में भक्ति तथा साहित्य संस्कृति के नव जागरण का शंखनाद हुआ। अपनी प्रगतिशील चिंताधारा एवं युगांतकारी सोच के कारण असम के लिए ही नहीं समग्र भारतवर्ष के लिए श्रीमंत शंकरदेव अपूर्व, बहुआयामी तथा उज्ज्वल व्यक्तित्व के अधिकारी सिद्ध हुए।

चरितपुथि के वर्णनानुसार महापुरुष शंकरदेव जगन्नाथ, पुरी, गया, काशी, प्रयाग, सीताकुंड, वराहकुंड, गोकुल, वृंदावन, गोवर्धन, कालीहद, मथुरा, कुरुक्षेत्र, रामहद, अयोध्या, द्वारिकाश्रम, सेतुकुंड, रामेश्वर आदि इन तीर्थों में रहकर महापुरुष शंकरदेव साधना के साथ-साथ साधु संतों से

साक्षात्कार किये। शास्त्र-चर्चा एवं वाद-विवाद भी किये। इसके पश्चात वे पूरे भारत को एकता के सूत्र में बांधने हेतु असमिया एवं अन्य भाषाओं के मेल से ब्रजबुली भाषा का सृजन किये। शंकरदेव ब्रजबुली में लिखते थे। संम्पूर्ण भारतीयता के साथ अपने को, अपने समाज को मिलाने का उनका यह प्रयत्न बहुत ही प्रशंसनीय है। पूरे पूर्वांचल को जोड़कर पुनः भारत से जोड़ने का यह एक महाप्रयास है। शायद शंकरदेव नही होते, तो हम और पीछे रह जाते। यही कथ्य सुमित्र पुजारी के निबंध "Indian Bhakti Movement and Shankardev His Role in Strenghthening the Cultural Bondage between Assam and the Rest of India" में भी है --- "As a student of History, I strongly believe that had there been no Shankardev,the socio- cultural bond of this region and the rest of India would have further weakened."[1]

सच्चे अर्थ में शंकरदेव देवदूत, समाज सुधारक, दार्शनिक, नाटककार, चित्रकार, संगीतज्ञ एवं लोकनायक संत थे।

मातृभूमि के रुप में भारतवर्ष का असम के साथ सर्वप्रथम परिचय कराने वाले श्रीमंत शंकरदेव ही रहे हैं। डॉ. विरिचि कुमार बरुवा का इस संबंध में वक्तव्य विशेष दृष्टव्य है "The conception of India as our mother country was conceived by Shankardeva five centuries ago. He wanted the people to feel proud of being born in his holy country of Bharatvarsha,as she provides an immense opportunity for development of man's moral and spiritual potentialities. Repeatedly did he emphase the glorious and spiritual experiences of India In many of his verses he spoke of the great heritage of this country Bharatvarsha. "[2]

श्रीमंत शंकरदेव द्वारा प्रचारित धर्म को एकशरण नामधर्म कहा जाता है। इस भक्ति धर्म का प्रधान उद्देश्य एक ही ईश्वर भगवान कृष्ण के चरण में शरण लेना है। भगवान कृष्ण ही परमब्रह्म परमेश्वर।

शंकरदेव के समय में धार्मिक शोषण ने असम के जनसाधारण की जीवन यात्रा को बड़ा भयंकर बना दिया था। उस समय समाज अंधविश्वास से भरा हुआ था। मंदिर में देव-देवी के सामने बलि विधान जैसे घृणित कार्य चल रहे थे।

महापुरुष शंकरदेव ने बलि विधान के विरोध में आवाज उठाई- "नमारिवे पशुक एड़िवे मांस-आशा देव को उद्देश्यि पशु नकरिवे हिंसा।"[3]

यद्यपि हमारी समाज व्यवस्था में जात-पात, ऊँच-नीच की भावना धीरे-धीरे शिथिल होती जा रही हैं, फिर भी उसे मिटाने में आज भी हम सफल नहीं हुए हैं। उस समय महापुरुष शंकरदेव इस व्याधि को मिटाने का अथक प्रयत्न कर रहे थे। श्रीमंत शंकरदेव ने असम के विभिन्न सम्प्रदायों के लोगों को लेकर, धर्म प्रचार किया। नगा के नरोत्तम, भूटिया के दामोदर, गारो के गोविन्द, मिरि के परमानन्द, मुसलमान के चाँद साँई भी थे। चाँद साँई के हाथों द्वारा सिलाई किया हुआ पंजाबी कुर्ता शंकरदेव ने खुद पहना था। नरेत्तम को नामघर में बुलाया गया था और कीर्तन करने के लिए अनुरोध किया था। डॉ. शिव आचार्य ने लिखा है - "He was invited to Namgharas and was inspired for stay in the Kirtanas. Sankar has never been found saying him 'Give up your Allah,do not offer your respect to him etc.' "His heart felt utmost devotion and listened attentively to what Sankardeva told."[4]

धर्म और भक्ति के माध्यम से श्रीमंत शंकरदेव ने भिन्न-भिन्न जनगोष्ठी को एक धारा में एकत्रित करने का सफल प्रयत्न किया था।

शंकरदेव द्वारा विरचित बरगीत उच्च नैतिक और आध्यात्मिक भावनाओं पर प्रतिष्ठित है। इसी कारण से उन्हें बरगीत अर्थात श्रेष्ठ गीत नाम से अभिहित किया गया। सच तौ यह है कि आध्यात्मिकता के उत्कृष्ट आदर्श की ओर जन समाज का हृदय आकृष्ट करना ही असमिया गीति साहित्य में बरगीत की एतिहासिक विशेषता रही है। शंकरदेव ने बरगीत में कहा है।

"अथिर धनजन जीवन यौवन

अथिर एहु संसार।

पुत्र परिवार सबहि असार करबी काहेरि सार ।।"[5]

अर्थात धन-सम्पति, जीवन-यौवन, संसार, पुत्र-पत्नि सब कुछ क्षणिक है, इसलिए भगवान को स्मरण करना चाहिए, वही शाश्वत है। साहित्य द्वारा प्रतिष्ठित हुए बिना कोई भी आंदोलनं सफल नहीं हो सकता और गीत ही ऐसे आंदोलन के सहायक होते हैं। बरगीतों के आकर्षण से ही कितने लोगों ने शंकरदेव का शिष्यत्व ग्रहण किया था। अतः शंकरदेव ने हर प्रकार से समाज को उचित मार्ग दिखाया था।

कीर्तन घोषा शंकरदेव की अमर कृति है। कीर्तन घोषा न केवल असमिया साहित्य जगत की एक अमूल्य निधि है, बल्कि सर्वभारतीय भक्ति आंदोलन के धार्मिक ग्रंथों में से एक है। महापुरुष शंकरदेव ने मूलत भागवत-पुराण की कहानियों, प्रसंगों के आधार पर कीर्तन की रचना की है.। इसके अलावा पद्म पुराण, विष्णुपुराण, ब्रह्मपुराण, ब्रह्मांडपुराण आदि से भी उन्होंने कथा वस्तु ली है। समग्र कीर्तन में श्रवण-कीर्तन पर ही सर्वाधिक जोर दिया है------

"कृष्ण किंकर शंकरे भणे।

करियो कीर्तन समस्त जने ।।"[6]

"कृष्ण कथा श्रवणत शुद्ध मन।

सर्वदाये करिवेक कृष्ण कीर्तन ।।"[7]

कृष्ण सर्वोपरि हैं उनकी लीला अपार हैं। कृष्ण किंकर शंकर के अनुसार कृष्ण नाम स्मरण से सकल प्रकार के पापों का नाश होता हैं।

"शुन सर्वजन एरि आन काम

स्थिर करि एक मति ।

कृष्ण नाम बिना इटो कलि युगे

नाहि नाहि आन गति ।।

जानिया कृष्ण चरणे शरण

पशियों सुदृढ़ मति।

बोला राम राम छाड़ि आन काम

लभिबा परम गति ।।'[8]

हरि, ब्रह्म, रुद्र, ईश्वर, सब एक ही है---- “शुनि हरि बुलिला वचन।

नोहे ब्रहम रुद्र आन जन ।।

मञि हरि जगत ईश्वर ।

मोते आछे यत चराचर ।।''[9]

नव वैष्णव आंदोलन का एक उल्लेखनीय दिशा है नामघर प्रतिष्ठा। असम के सामाजिक, अर्थनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, क्षेत्र में सत्र और नामघर का स्थान विशेष महत्वपूर्ण है। सत्र एक विशाल संस्था है। नामघर सत्र के अंतर्गत है। श्रीमंत शंकरदेव सृष्ट नामघर मानवधर्म, मानवकर्म, नीतिशिक्षा का तीर्थ क्षेत्र भी कहा जाता है, क्योंकि यहाँ कोई जात-पात, ऊँच-नीच भेदभाव नही हैं।

"विचित्र चन्द्रातप आछे टानि।

आरिला मूरारि मुकुता मणि ।।

हेन मंदिरे रत्न सिंहासने ।

आछंत वसि प्रभू नारायणे ।।''[10]

नामघर में बैठकर जो भजन कीर्तन किया जाता है इसकी शैली सर्वथा भिन्न है। उस कीर्तन को गाने के लिए एक गायक होता है जो गाता भी है और काँसे के बड़े बड़े तालों को बजा-बजाकर घोषा दोहराता जाता है और भक्तगण उनके स्वर में स्वर मिलाकर हाथ से ताली बजाते जाते हैं। अनेक शोषित-पीड़ित प्रजा शंकरदेव की शरण में आयी थी। सत्र-नामघरों में बैठकर इन्होंने भगवान के नाम पर समर्पित नैवेददा के कच्चा मूंग, जिसमें अदरक नारियल और नमक मिश्रित था, ग्रहण की। भगवान को कच्चा मूग का नैवद्य चढ़ाने की प्रथा असम को छोड़कर देश भर में अन्यत्र कहीं नही है। शंकरदेव ने इसके द्वारा लोगों के मन को स्वस्थ करने के साथ-साथ शरीर को भी स्वस्थ बनाया था।

श्रीमंत शंकरदेव की नाट्य यात्रा प्रारंभ होती है पहली बार तीर्थ यात्रा से लौटने के पश्चात। तीर्थ से लौटने के बाद अपने लोगों ने उनसे भागवत भक्ति का महत्व सुना तो उनके प्रति आग्रह को देखते हुए उन्होंने चिह्न यात्रा नामक नाटक को अभिनीत करने का तय किया, जिसे उन्होंने चिह्न के यानी पर्दो के जरिए सात दिन सात रात तक दिखाया। कहा जाता है

कि इन दिनों लोग अपनी सुध-बुध खोकर इसे देख रहे थे। भागवत के दशम स्कंध के आधार पर इसे पर्दो पर दिखाया जा रहा था। लेकिन, इसके मंचन के संबंध में चरितकारों से स्पष्ट जाना नही जाता कि वास्तव में शंकरदेव ने इसे किस प्रकार दिखाया था। चिह्न यात्रा नामक कोई लिखित नाटक था या भागवत के आधार पर चित्रों के माध्यम से इसे दिखाया गया था। गुरु चरितों से इसका भी पता नहीं चलता कि अभिनय और चित्रों के अतिरिक्त उसमें संलाप भी था।

श्रीमंत शंकरदेव ने एक विशेष प्रकार की नाट्यकला का सृजन किया था जो अंकिया नाट नाम से विश्वप्रसिद्ध है। एक अंक का नाटक रचने का अन्यतम तथा मुख्य कारण यही था कि शंकरदेव ने नाटक की रचना मंचन हेतु की थी और उसके द्वारा विष्णु भक्ति का प्रचार किया था। इसी कारण से अंकिया नाटकों में सूत्रधार नाटक के प्रारंभ से अंत तक मंच पर रहते और दर्शक मंडली तथा नाटक की कथा का मध्यस्थ व्यक्ति होते हैं।

"हरि भकतिक महिमा कि कहव।

आहे लोकाइ, पेखु पेखु, हरिगुण नाम श्रवण कीर्तन बिने कलित गति नाहि नाहि।

जानि निंरतरे हरिवोल हरिवोल ।।" [11]

उन्होंने कुल छः नाटकों की रचना की जो इस प्रकार है--पत्नीप्रसाद, कालीय दमन, केलीगोपाल, रुक्मिणीहरण, पारिजात हरण, राम विजय।

इस प्रकार श्रीमंत शंकरदेव ने अपने काव्यों तथा नाटकों द्वारा इस भू-भाग में परिव्याप्त भ्रष्टाचार तथा व्यभिचार को समाज से दूर कर एक स्वस्थ सुंदर समाज का निर्माण किया था।

अतः श्रीमंत शंकरदेव एक महान साहित्यिक, गीतिकार, नाटककार और संत ही नही थे, अपितु एक समाज संगठक तथा सुधारक भी थे। इन्होंने जीवन भर समाज के बारे में ही सोचा। श्रीमंत शंकरदेव ने भारत की असम धरा पर जिस शाश्वत भारतीय साहित्य की रचना सदियों पूर्व की, वह न केवल धार्मिक अपितु साहित्यिक, सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टि से भी अन्यतम उपलब्धि है।

सन्दर्भः-

1. Srimanta Sankardev Bharata Barise, Bharatiya Itihas Sankalan Samiti, Assam, P. 159

2. राय चौधरी, डॉ. भूपेन्द्र- 'शंकरदेव और तुलसीदास की वैचारिक भावभूमि', 1997, निवेदन से उद्धृत।

3. बरुवा, हरिनारायण दत्त (संपा)- 'भागवत एकादश स्कन्ध, निमि-नव-सिद्ध संवाद', पृ. 348

4.Srimanta Sankardev Bharat Barise, Bharatiya Itihas Sankalan Samiti, Assam, P. 87

5. महंत, नीलनणि (संपा) 'बरगीत आरु निर्वाचित नाटर गीत', समलय बुक स्टॉल, 2004, पृ. 24

6. गोस्वामी, दामोदर देव (संपा)- 'कीर्तन घोषा, दैवकी पुत्र आनयन, 34', पृ. 314

7. गोस्वामी, दामोदर देव (संपा) 'कीर्तन घोषा, प्रह्लाद चरित्र, 161', पृ. 91

8. गोस्वामी, दामोदर देव (संपा) 'कीर्तन घोषा,दैवकी पुत्र आनयन, 23', पृ. 391

9. गोस्वामी, दामोदर देव (संपा)- 'कीर्तन घोषा, उरेषा वर्णन, 141', पृ. 307

10. श्रीश्री शंकरदेव, श्रीश्री माधवदेव 'कीर्तनधोषा आरु नामधोषा, ध्यान वर्णन, 6', बरुवा एजेन्सि, 1995, पृ. 37

11. गोस्वामी, डॉ. केशवानन्द (संपा)- 'अंकमाला', प्रकाशक बनलता, तीसरा संस्करण, 1999, पृ. 97

ई. मेल -purabikalitapurabi@gmail.com